शोध पत्रिका
2019
मूल्य : 100 रुपए

ISSN : 0974-7958

शोधश्री

संरक्षक :
डॉ. पी. के. कालड़ा
निदेशक, दयालबाग़ एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, आगरा

परामर्श :
प्रो. जे. के. वर्मा, डीन, कला संकाय
प्रो. शर्मिला सक्सेना, अध्यक्ष हिंदी विभाग

संपादक :
डॉ. प्रेमशंकर सिंह
डॉ. बृजराज सिंह

संपादन सहयोग :
डॉ. रंजना पांडे
अरविंद, पूजा यादव,
प्रीति, गुर प्यारी यादव

संपादकीय संपर्क :
हिंदी विभाग, दयालबाग़ एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, आगरा
ई-मेल : shodhshreedei@gmail.com
मोबाइल : 9838709090, 9415703379

दयालबाग़ एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, आगरा

प्रकाशक, मुद्रक दयालबाग़ एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग़, आगरा के लिए दयालबाग़ एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, दयालबाग़, आगरा से प्रकाशित और आर.के. ऑफसेट प्रोसेस, एम.-28, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 से मुद्रित। संपादक : डॉ. प्रेमशंकर सिंह/डॉ. बृजराज सिंह

अनुक्रम

संपादकीय 3

भोजपुरी और राजस्थानी लोकगीतों की समान भाव भूमि / *डॉ. महीपालसिंह राठौड़* 4
केदारनाथ मिश्र 'प्रभात' प्रणीत 'कैकेयी' महाकाव्य में नूतन उद्‌भावना / *डॉ. जयश्री बंसल* 10
प्रासंगिकता का सवाल और भक्ति काल / *डॉ. क्रान्ति बोध* 14
आधुनिकतावादी संत्रास के व्याख्याकार : विजयदेव नारायण साही / *मृत्यंजय* 19
मोहन राकेश के नाटकों में आधुनिकता एवं उत्तर आधुनिकता की अभिव्यक्ति / *डॉ. पाण्डव कुमार* 24
राही मासूम रज़ा के 'आधा गाँव' उपन्यास में दलित विमर्श / *मोनिका कुमारी* 30
बागड़ी समाज के रीति-रिवाज व विभिन्न रस्में / *डॉ. राजेन्द्र कुमार सेन* 33
शृंखला की कड़ियाँ : स्त्री-मुक्ति का दस्तावेज / *शुभम यादव* 40
समकालीन हिंदी कविता की भाषा संरचना / *ज्योति यादव* 43
राजस्थान में आजादी के बाद कला यात्रा / *डॉ. मोहन लाल जाट* 46
स्त्री विमर्श और महादेवी वर्मा का काव्य / *डॉ. कामिनी* 50
पद्मावत में लोकतत्व और भारतीय संस्कृति / *मंजू चौरसिया* 53
हिन्दी रंगालोचन का स्वरूप / *डॉ. अल्पना त्रिपाठी* 56
सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की काव्ययात्रा / *डॉ. अवधेश त्रिपाठी* 64
दलित साहित्य की वैचारिक बहस के कुछ आयाम / *डॉ. दीपक सिंह* 74
हिन्दी कथा साहित्य में ग्राम / *डॉ.रंजना पाण्डेय* 79
ग़ालिब : आधुनिक चेतना / *डॉ. नमस्या* 84
मैत्रेयी पुष्पा के 'विज़न' उपन्यास में परिलक्षित स्त्री पुरुष संबंध / *अलका यादव* 87

शोधश्री–2019 : ISSN : 0974-7958

स्त्री विमर्श और महादेवी वर्मा का काव्य

डॉ. कामिनी *

समकालीन समय में स्त्री विमर्श स्त्री मुक्ति के संदर्भ में पारिभाषित किया जाता है। पुरुष शासित समाज में स्त्री को जो रूप दिया गया है उसके साथ अपनी सहमति–असहमति और विरोध के साथ स्वयं की सत्ता का अहसास ही स्त्री विमर्श है जैसा कि डॉ. रामपाल गंगवार लिखते हैं—''स्त्री विमर्श का दर्शन वस्तुत: स्त्री की मुक्ति से संबंधित है यह मुक्ति मानसिक–भौतिक एक साथ है। मानसिक मुक्ति का संबंध सांस्कृतिक मुक्ति से है, सामाजिक सोच में परिवर्तन से है।''[1]

विमर्श के रूप में 'स्त्री–विमर्श' उत्तर आधुनिकतावादी दौर के साथ शुरू होता है। विमर्श को शक्ति या सत्ता को अधिकृत करने का साधन माना जाता है। स्त्री का पुरुष वर्चस्व से मुक्त होकर पुरुषों के बराबर राष्ट्रीय और सामाजिक विकास में अपनी भूमिका निर्धारित करने के लिए शक्ति सम्पन्न हो सकना ही स्त्री विमर्श है वस्तुत: स्त्री के जागृत होने को ही स्त्री विमर्श कहा जा सकता है। भारत में नारी जागरण की शुरुआत नवजागरण के साथ होती है। उस समय स्त्री की स्थिति का प्रश्न महत्त्वपूर्ण था। जन्म से लेकर मृत्यु तक वह पुरुष की इच्छा पर निर्भर थी। नवजागरण के दौरान महात्मा ज्योतिबाराव फुले और उनकी पत्नी साबित्री देवी फुले ने न केवल स्त्रियों की सामाजिक गुलामी के विरूद्ध आवाज उठाई, बल्कि उन्होंने शिक्षा के अधिकारों का भी समर्थन किया।

स्त्री विमर्श की दृष्टि से सन् 1882 का वर्ष स्त्री जागरण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है क्योंकि इसी वर्ष महाराष्ट्र की क्रांतिकारी महिला ताराबाई शिन्दे की पुस्तक 'स्त्री–पुरुष तुलना' छपी, जिसमें स्त्री–दृष्टि से महाराष्ट्र की पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था की आलोचना की गई है। इसी वर्ष हिन्दी में भी एक पुस्तक छपी—'सीमंतनी उपदेश'। इसकी लेखिका को अज्ञात हिन्दू औरत माना गया है। इस पुस्तक में नारी जागरण और उसकी, आजादी की आवाज अत्यन्त बुलन्द स्वर में उठाई गई है—सीमंतनी उपदेश में विधवा जीवन, सती–प्रथा, पतिव्रता तथा सतीत्व सम्बन्धी भ्रामक धारणाओं का खण्डन किया गया है। भारतीय स्त्री की पराधीनता की पीड़ा का जिक्र उनके इस कथन से स्पष्ट है—''अगर इस दुनिया में कुछ खुशी है तो उन्हीं को है जो अपने तईं आजादी रखते हैं। हिन्दुस्तानी औरतों को तो आजादी किसी हालत में नहीं हो सकती। बाप, भाई, बेटा, रिश्तेदार– सभी हुकुमत रखते हैं। मगर जिस कद्र खाविन्द जुल्म करता है उतना कोई नहीं करता, लौंडी तो यह सारी उम्र सब ही की रहती है, पर शादी करने से बिल्कुल जरखरीद हो जाती है। इस दुनिया में चाहे बादशाहत की नियामत मिले और आजादी न हो, नर्क के बराबर है।[2]

बीसवीं सदी से दूसरे दशक में नारी जागरण का यह स्वर और मुखर हुआ और स्त्री जीवन से जुड़ी विभिन्न पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। हिन्दी नवजागरण के अग्रदूत भारतेन्दु 'बालाबोधिनी' पत्रिका निकाल कर और 'नारी नर सम होहिं' कहकर पहले ही नारी जागरण की वकालत कर चुके थे। इसी के बाद महादेवी वर्मा भी चाँद पत्रिका के साथ हिन्दी साहित्य के परिदृश्य पर आती हैं। महादेवी वर्मा चाँद से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई है थीं, पहले एक कवि के रूप में और बाद में एक सम्पादक के रूप में। सन् 1935 में चाँद का विदुशी अंक महादेवी वर्मा के संपादन में निकला। इसके माध्यम से उन्होनें स्त्रियों को आत्म सजग करने का प्रयास किया।

महादेवी के सन्दर्भ में विचार करते हुए आलोचक अक्सर उनके गद्य एवं पद्य को अलग–अलग करके आँकते हैं और विश्लेषण मुख्यत: उनके कविता–प्रसंग के अन्तर्मुखता, वैयक्तिकता, विरह, वेदना जैसे शब्दों के इर्द–गिर्द घूमता रह जाता है महादेवी का व्यवस्था के ख़िलाफ़ आक्रोश और परिवर्तन की माँग करता हुआ गद्य हाशिये पर चला जाता है जो महादेवी के जीवन का देखा, झेला एवं अनुभव किया यथार्थ भी था। यह खण्डित आलोचना दृष्टि सीधे तौर पर मान लेती है कि ''अपनी हरसाँस का इतिहास लिख डालने को आतुर कवयित्री गद्य में तो अपनी

सहायक प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय नवीन कन्या महाविद्यालय बैकुंठपुर

सामाजिक भावना को व्यक्त करती है और कविता में अपने विशिष्ट आत्मीय जीवन-प्रसंगों को।''[3] महादेवी वर्मा की कविता के मूल्यांकन के सन्दर्भ में प्राय: एक आलोचनात्मक पूर्वाग्रह दिखाई देता है कि महादेवी दुख की, पीड़ा की, वेदना की कवयित्री है। महादेवी की कविता मे रहस्यवाद की खोज की जाती है। उस दुख, पीड़ा वेदना के पीछे भारतीय नारी का जो चित्र महादेवी जी ने खींचा उसकी ओर प्राय: आलोचकों का ध्यान नहीं जाता। उनके गद्य में जो स्पष्ट है, वही उनकी कविताओं में छिपा हुआ है। भारतीय स्त्री के जीवन के अनुभवों, आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति वे श्रंखला की कड़ियाँ में स्पष्ट रूप से करती है तो उनके काव्य को उससे अलग करके कैसे देखा जा सकता है उनके मूल्यांकन के सन्दर्भ में पन्त जी के विचार द्रष्टव्य हैं— ''उन्हें हमें मध्य युगों की पीठिका से हटाकर इसी युग के बाहरी-भीतरी बौद्धिकी, हार्दिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक, सशक्त, मर्मस्पर्शी, लोकव्यापी प्रभावों की संश्लिष्ट संग्रहित भूमिका पर खड़ा कर देखना चाहिए।''[4]

महादेवी के काव्य में जो आँसू हैं, वह किसी कमजोरी के पर्याय के रूप में नहीं आते, ये आँखों के वे उजले आँसू हैं, जिससे धुलकर जीवन नया अर्थ पाता है। इस आँसू या वेदना का अर्थ पराजय या पलायन नहीं है अपितु वह नारी के दुखते कष्टों की, नारी अवचेतना की स्पष्ट अभिव्यक्ति है। प्रो. मैनेजर पाण्डेय के अनुसार—''महादेवी वर्मा की कविता में जो दुख, वेदना, निराशा और अंतर्मुखता है, वह सब उनके समय की और आज की भी भारतीय स्त्री के जीवन की वास्तविकताएं हैं और सम्भावनाएं भी।''[5]

महादेवी के नारी-मन ने समाज से यह छूट पहली बार ली कि यह कह सके कि 'उनसे कैसे छोटा है मेरा यह भिक्षुक जीवन'।[6] प्रियतम को बराबरी में पाना-अपनाना महादेवी को मान्य है, लेकिन पुरुषवाद के प्रति खुला विद्रोह और हिकारत का भाव। महादेवी नारी की मुक्ति, उसकी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करती हैं। नारी-मुक्ति के लिए महादेवी के काव्य में तीव्र बेचैनी है नारी जागरण का सामाजिक विस्तार उनकी चेतना के कोने-कोने में दहक रहा हैं। तभी वह कह सकी हैं—

''कीर का प्रिय आज आज पिंजर खोल दो/हो उठी है चंचु छूकर/तीलियाँ भीवेणु सस्वर/वन्दिनी स्पन्दित व्यथा ले/सिहरता जड़ मौन पिंजर/आज जड़ता में इसी की बोल दो।''[7]

यह जड़ता उस नारी-जीवन की जड़ता है, जो सदियों से पुरुष -वर्चस्व के भीतर जीती आई है। महादेवी की पीड़ा व्यक्तिगत न होकर सामंती जंजीर में जकड़ी सामाजिक रूढ़ियों से ग्रस्त नारी जीवन की पीड़ा है। छायावादी काव्य में भारतीय नारी जीवन की सिसकती पीड़ा को जोड़ देना महादेवी जी के काव्य का मौलिक योगदान है भारतीय समाज में परतंत्र नारी के करूणा का भी यह प्रतीक है। कवयित्री ने नारी की भावनाओं की अभिव्यक्ति अपनी कविताओं में अनेक रूपों से की है।

महादेवी जी के काव्य में पुरुष वर्चस्ववाद से घिरी अकेली नारी की पीड़ा है। ''महादेवी जी के आँसुओं में व्याप्त यातना में नारी-व्यथा की वास्तविकता का वह इतिहास मौजूद है, जिसे अभी पुरुष प्रधान वर्चस्ववाद में ठीक से लिखा नहीं जा सका है। इस नारी दमन की कथा-व्यथा को भविष्य में स्त्री-विमर्श अपने ढंग से अवश्य लिखेगा और इन गीतों के दमित अर्थ का मिशेल फूको की शक्ति सत्ता थियरी से मदद लेकर नया पाठ नया विमर्श या साक्ष्य प्रस्तुत करेगा।''[8]

महादेवी जी की कविता में अँधेरा बहुत बार आता है, लेकिन इस अँधेरे के साथ-साथ एक दीपक भी आता है, जो महादेवी जी को बहुत प्रिय है। जैसा कि वह 'दीपशिखा' की भूमिका में कहती हैं-आलोक मुझे प्रिय है पर दिन से अधिक रात का दिन में तो अंधकार से उनके संघर्ष का पता ही नहीं चलता, परंतु रात में हर झिलमिलाती लौ योद्धा की भूमिका में अवतरित होती है। उनके इस कथन से उनकी संघर्षप्रियता का पता चलता है। उनकी कविता पर बार-बार जो पलायन का आरोप लगाया जाता है, वह संघर्ष की स्थिति में कैसे सम्भव है। महादेवी जी के यहाँ अंधकार से संघर्ष करने वाला दीपक भारतीय स्त्री की तरफ है। जो निरन्तर अपने अस्तिस्व के लिए जूझ रही हैं। प्रो. मैनेजर पाण्डेय के अनुसार—''उनकी कविता में अंधकार से आलोक का जो संघर्ष है, वह भारतीय स्त्री के जीवन की पराधीनता से स्वाधीनता की आकांक्षा का सघर्ष है।''[9]

महादेवी जी के यहाँ संघर्ष नारी-जागरण के रूप में आता है। महादेवी जी ने अपनी पुस्तक 'श्रृंखला की कड़ियाँ' में जो कुछ लिखा, वह किसी स्त्री-केन्द्रित चिन्तन का पश्चिमी अनुकरण नहीं था और न ही वे स्त्री शोषण का सुसम्बद्ध इतिहास लिखने की कोशिश कर रहीं थी बल्कि उनके इस विमर्श का केन्द्र भारतीय स्त्रियों की दयनीय स्थिति थी। स्त्रियों की इस दयनीय स्थिति और उस स्थिति से संघर्ष का चित्रण महादेवी जी अपनी कविता में करती हैं। यह संघर्ष सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं के प्रति सजगता और नर-नारी की समानता के भाव के रूप में आता हैं। वह नारी के भोगवाद और रीतिवाद का पर्याय मानी जाती थी, वह महादेवी के काव्य में एक सशक्त नारी के रूप में आती है, तभी महादेवी जी कहती है कि—

''चिर सजग आँखे उनींदी आज कैसा व्यस्त बाना!

जाग तुझको दूर जाना/कह न ठंडी साँस में, अब भूल वह जलती कहानी/आग हो उर में तभी दृग में सजेगा आज पानी/

हार भी तेरी बनेगी मानिनी जय की पताका/राख क्षणिक पतंग की है अमर दीपक की निशानी/है तुझे अंगार-शय्या पर मृदुल कलियाँ बिछाना/जाग तुझको दूर जाना।'[10]

महादेवी जी की कविताओं में आँसू इसीलिए है क्योंकि उर में आग है। यह आग ही स्त्री-जागरण में सहायक हैं। प्राचीन काल से सामंती बंधनों में जकड़ी नारी अपनी मुक्ति के लिए छटपटा रही है। वह सदियों से एक निश्चित सीमा में कैद रही है तभी वह कह सकी है कि—''तोड़ दो यह क्षितिज मैं भी देख लूँ उस ओर क्या है?''[11] उस ओर के संसार को देख लेने की लालसा नारी को जागृत करने में सहायक रही हैं। अब वह इतनी हिम्मत कर सकी है कि क्षितिज को अर्थात् उस रहस्यमय आवरण को तोड़ने की बात कर रही हैं, जिसमें वह सदियों से आबद्ध रही हैं।

महादेवी जी के यहाँ स्वतंत्र नारी-व्यक्तित्व की व्यंजना के संकेत है। पुराने जर्जर मूल्यों से पैदा हुए संस्कारों के प्रति वह क्रांतिकारी हैं तभी अपने प्राणों का दीप जलाकर वह दीवाली मनाती हैं -

''अपने इस सूनेपन की मैं हूँ रानी मतवाली
प्राणों का दीप जलाकर करती रहती दीवाली'[12]

महादेवी जी के यहाँ जो आत्माभिव्यक्ति की आकांक्षा है, वह आत्मप्रसार करना चाहती है उनके काव्य में आये हुए चातक, बादल और दीपक सभी मुक्ति के प्रतीक हैं। आत्म प्रसार में कवयित्री सारे बंधनों को तोड़ देना चाहती है महादेवी के काव्य में प्रिया, प्रेयसी, सजनी, सखी, प्रियतम से ऊँचे आसन पर बैठी दिखाई देती है, जो नारी जागरण का प्रतीक है। महादेव जी के इस नारी चिंतन के बारे में प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल का कथन द्रष्टव्य है—''इन नारी-मन के चिंतन और चिति में जो प्रभु या प्रिय या करूणानिधि बसा हुआ है, उसमें भी पति का मध्ययुगीन आतंक नहीं है। आधुनिक जीवन और उस चिंतन से उत्पन्न बराबरी का समानता, बंधुता का भाव हैं जहाँ कहीं बराबरी का भाव न होने का अहसास मात्र हुआ है वहाँ पर गहरा आक्रोश शब्दमूर्त हुआ है। 'उनसे कैसे छोटा है मेरा यह भिक्षुक जीवन'' जैसे ललकार-भरे कथन है प्राचीन बाल-विवाह और स्वयं का बाल-विवाह उनमें स्थायी दर्द बनकर उठता हैं नारी-पुरुष को वे मात्र दाम्पत्य बंधन में नहीं जकडती, बल्कि दांपत्येतर रिश्तों में बाँधती है। इस तरह भारतीय नारी का संचित-दमन-संत्रास-कुंठा इस काव्यात्मकता में विरेचन पाता है—पावनता जनित विवेक के साथ।''[13]

महादेवी वर्मा ने जो चिंतन अपने ग्रन्थ शृंखला की कड़ियाँ में किया है, वही उनके काव्य में भी देखा जा सकता है। काव्य और गद्य को अलग-अलग करके नहीं देखा जा सकता। उनकी 'शृंखला की कड़ियाँ' अगर गद्य में स्त्री-विमर्श की शुरुआत है जैसा कि शिव कुमार मिश्र जी कहते हैं—''महादेवी की शृंखला की कड़ियाँ सही मायने में स्त्री-विमर्श को शुरू करने वाली किताब है। हमारे समाज में स्त्री की हैसियत उसकी अस्मिता से जुड़े जो तमाम मुद्दे हैं, वे सब महादेवी ने इस किताब में उठाये है।''[14] तो उनका काव्य भी भारतीय स्त्री की मुक्ति की छटपटाहट का काव्य है। एक स्त्री होकर उस युग में महादेवी जी ने जो कुछ रचा वह एक नारी के द्वारा नारी की व्यथा का चित्रण था। उस युग में बहुत स्पष्ट नहीं कहा जा सकता था, इसलिए महादेवी जी ने कई बार छिपाकर कहना चाहा है, जिसके लिए उन पर रहस्यवाद के आवरण का आरोप लगाया जाता है।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची

1. मुक्तिबोध : कामायनी एक पुनर्विचार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1991 पृ. 115
2. डॉ. रामपाल गंगवार : समकालीन प्रश्न और साहित्य चिंतन, राका प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-2007 पृ. 48
3. सं. डॉ. धर्मवीर : सीमन्तनी उपदेश, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण-2006 पृ. 84
4. सं. परमानन्द श्रीवास्तव : महादेवी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद 2003 पृ. 20
5. सं. इन्द्रनाथ मदान : महादेवी, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली-2005 पृ. 14
6. प्रो. मैनेजर पाण्डेय : अनमे साँचा, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली पृ. 178
7. सं. प्रो. निर्मला जैन : महादेवी साहित्य समग्र-1 वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-2000 पृ. 49
8. महादेवी वर्मा : सान्ध्यगीत, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2002 पृ. 64
9. प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल : नवजागरण और महादेवी वर्मा का रचना कर्म: स्त्री विमर्श के स्वर, किताब घर प्रकाशन, दिल्ली-2010 पृ. 45
10. प्रो. मैनेजर पाण्डेय : अनभै साँचा, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली पृ. 179
11. महादेवी वर्मा: सान्ध्यगीत, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-2002 पृ. 62-63
12. वही पृ. 60
13. सं. प्रो. निर्मला जैन : महादेवी साहित्य समग्र-1, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-2000 पृ. 41
14. प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल : नवजागरण और महादेवी वर्मा का रचना कर्म स्त्री विमर्श के स्वर, किताब घर प्रकाशन, दिल्ली 2010 पृ. 96
15. गवेशणा पत्रिका (स्त्री की भाषा/महादेवी के संदर्भ में) अंक 87, 2007 पृ. 167